मुश्किल है चीते का पुनर्वास

प्रमोद भार्गव

वन विभाग गिर वन के सिंह की तरह चीतों की भी भारत में पुनर्वास की योजना बनाने में लगा है। लेकिन यह प्रयास मुश्किल तो है ही बेमानी भी है। क्योंकि जो वन महकमा वनवासियों के विस्थापन और कूनो पालपुर अभयारण्य में सीमेंट कांक्रीट के जंगल तैयार करने पर करोड़ों रुपए खर्च करके गिर का एक भी सिंह अभयारण्य में नहीं बसा सका, वह अब दक्षिण अफ्रीका से चीतों को लाकर राजस्थान के बीकानेर में कैसे बसा पाएगा? वैसे इस योजना के शुरुआती पत्राचार में ही ईरान ने भारत सरकार को चीते देने से साफ इंकार कर दिया है। अब वन महकमा अफ्रीका से चीता लाने के प्रयासों में लगा है। विरोधाभास यह भी है कि सबसे तेज़ दौड़ने वाले इस प्राणी को रहने के लिए कम से कम एक हज़ार वर्ग किलोमीटर के ऐसे मैदान की ज़रूरत होती है जो मानव आबादी से सर्वथा मुक्त हों, जबकि बीकानेर में महज 20 किलोमीटर वर्ग क्षेत्र ही चीता के पुनर्वास हेतु चिन्हित किया गया है।

भारतीय वनों में तेज़ रफ्तार का अद्भुत चमत्कार चीता हमारे जंगलों से इस सदी के पांचवे दशक में ही पूरी तरह लुप्त हो गया था। अपनी विशिष्ट लोचपूर्ण देहयष्टि के लिए भी इस हिंसक वन्य जीव की अलग पहचान थी। शरीर में इसी चपलता के कारण यह जंगली प्राणियों में सबसे तेज़ दौड़ने वाला प्राणी था। इसलिए इसे जंगल की बिजली भी कहा गया।

दक्षिण अफ्रीका के जंगलों से 1983 में दिल्ली के चिड़ियाघर में चार चीते लाए गए थे, लेकिन छह माह के भीतर ही ये चारों चीते मर गए। चिड़ियाघर में इनके उचित संरक्षण, परवरिश व प्रजनन के उपाय भी किए गए थे और यह उम्मीद की गई थी कि यदि इनकी वंश वृद्धि होती है तो इन्हें देश के अन्य चिड़ियाघरों में स्थानांतरित किया जाएगा। यह योजना सपना ही साबित हुई। वैसे भी चीतों में चिड़ियाघरों में प्रजनन अपवाद स्वरूप ही देखने में आया है।

अफ्रीका के खुले, घास वाले जंगलों से लेकर भारत सहित लगभग सभी एशियाई देशों में पाया जाने वाला चीता अब पूरे एशियाई जंगलों में से एकदम लुप्त हो गया है। यदि कहीं है भी तो इक्का-दुक्का ही। राजा चीता (*एसिनोनिक्स रेक्स*) जिम्बाब्वे में मिलता है। अफ्रीका के जंगलों में भी गिने-चुने चीते रह गए हैं हालांकि वहां की सरकार अभी अफ्रीकी जंगलों में 10 हज़ार चीते होने का दावा करती है मगर इनके दर्शन दुर्लभ हैं। तंज़ानिया के सेरेंगती राष्ट्रीय उद्यान और नमीबिया के जंगलों में गिने-चुने चीते हैं। ईरान में ज़रूर चीतों की संख्या 60-80 हज़ार बताई जाती है। तब भी वह भारत को चीते देने को तैयार नहीं है। प्रजनन के तमाम आधुनिक व वैज्ञानिक उपायों के बावजूद जंगल की इस फुर्तीली नस्ल की संख्या बढ़ाना संभव नहीं हुआ है।

इस सदी के पांचवे दशक तक चीते अमरीका के चिड़ियाघरों में भी थे। प्राणी विशेषज्ञों की अनेक कोशिशों के बाद चिड़ियाघर में चीते ने 1956 में शिशुओं को जन्म भी दिया। पर एक भी शिशु को न बचाया जा सका। चीते द्वारा किसी चिड़ियाघर में जोड़ा बनाने की यह पहली घटना थी, जो नाकाम रही। जंगल के हिंसक जीवों का प्रजनन चिड़ियाघरों में आश्चर्यजनक ढंग से प्रभावित होता है, किसी वजह से शेर, बाघ, तेंदुए व चीते चिड़ियाघरों में जोड़ा बनाने की इच्छा ही नहीं रखते। अपवाद स्वरूप प्रजनन की एकाध घटना चिड़ियाघरों में घट जाती है।

भारत में 20वीं सदी के पहले चार दशकों तक करीब 100 चीते गुजरात, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में थे, लेकिन 1947 आते-आते सब चीते मार गिराए गए। चीतों की अंतिम पीढ़ी के कुछ सदस्य बस्तर के घने जंगलों में थे। इन्हें 1952 में देखा गया था। प्रदेश अथवा भारत सरकार इनके संरक्षण के ज़रूरी उपाय करने हेतु हरकत में आती, इससे पहले ही चीतों के इन अंतिम वंशजों को भी शिकार के शौकीन राजा-महाराजाओं ने मार गिराया और जंगल की बिजली के ताबूत में अंतिम कील ठोंक दी।

हमारे देश के राजा-महाराजाओं को घोड़ों और कुत्तों की तरह चीते पालने का भी शौक था। चीता शावकों को पालकर इनसे जंगल में शिकार कराया जाता था। राजा लोग जब जंगल में शिकार के लिए जाते, तो प्रशिक्षित चीतों को बैलगाड़ी में बिठाकर साथ ले जाते थे। इनकी आंखो पर पट्टी बांध दी जाती थी, ताकि ये किसी मामूली वन्य जीव पर न झपटे। अच्छा शिकार नज़र आते ही चीते की आंखों की पट्टी खोलकर शिकार की दिशा में हाथ से इशारा कर दिया जाता। पलक झपकते ही शिकार चीते के कब्ज़े में होता था। शिकार का यह अद्भुत करिश्मा देखना भी रोमांचक रहा होगा।

भारत के अनेक राजमहलों में पालतू चीतों से शिकार कराने के चित्र अंकित हैं। अकबर ने सैकड़ों चीतों को बंधक बनाकर पाला। मध्यप्रदेश में मांडू विजय से लौटने के बाद अकबर ने चंदेरी और नरवर (शिवपुरी) के जंगलों में चीतों से वन्य प्राणियों का शिकार कराया। नरवर के जंगलों में अकबर ने जंगली हाथियों का भी खूब शिकार किया। ग्वालियर रियासत में सिंधिया राजाओं ने भी चीते पाले हुए थे। लेकिन ग्वालियर रियासत में चीते पालने का शगल ज़्यादा समय संभव न रहा। मार्को पोलो ने तेरहवीं शताब्दी के एक दस्तावेज़ का उदाहरण देते हुए बताया है कि कुबलई खान ने अपने कारोबार के पड़ाव पर एक हज़ार से भी अधिक चीते पाल रखे थे। इन चीतों के लिए अलग-अलग दड़बे थे। चीते इस पड़ाव की चौकीदारी भी करते थे। बड़ी संख्या में चीतों को पालतू बनाने से इनके प्राकृतिक स्वभाव पर प्रतिकूल असर तो पड़ा ही, इनकी प्रजनन क्रिया भी बाधित हुई। गुलामी की ज़िन्दगी गुज़ारने व रईस के हंटर की फटकार की दहशत ने इन्हें मानसिक रूप से दुर्बल बना दिया, जिससे इन्होंने विभिन्न शारीरिक क्रियाओं में रुचि लेना बन्द कर दिया। समय-असमय भेड़-बकरियों की तरह हांक लगा देने से भी इनकी सहजता प्रभावित हुई। चीतों की ताकत में कमी न आए इसके लिए इन्हें मादाओं से अलग रखा गया। बैलों की तरह नर चीतों को बधिया करने की क्रूरता भी राजा-महाराजाओं ने खूब अपनाई। इन सब कारणों से जंगल की यह बिजली मंद पड़ती गई और बीसवीं सदी के मध्य तक एशिया भर में बुझ भी गई।

चीते की लंबाई साढ़े चार से पांच फीट होती है। बिल्ली प्रजाति के प्राणियों में चीते की पूंछ सबसे लंबी होती है। इसकी लंबाई दो से ढाई फीट होती है। इसकी टांगें लंबी और कमर पतली होती है। इसके पूरे बदन पर छोटे-बड़े काले गोल-गोल धब्बे होते हैं। इसकी आंखों की कोरों से काली धारियां निकलकर इसके मुख तक आती है। ये धारियां बिल्ली प्रजाति के अन्य प्राणियों में नहीं होतीं। इसके गालों का हिस्सा उभरा हुआ होता है तथा सिर शरीर के अनुपात में थोड़ा छोटा होने के साथ धनुषाकार होता है। इससे दौड़ते वक्त फेफड़ों से छोड़ी गई हवा के निष्कासन में कोई बाधा नहीं होती।

चीते की तेज़ गति में सबसे ज़्यादा सहायक है इसकी छल्लों युक्त रीढ़ की हड्डी। इन्हीं छल्लों के कारण रीढ़ की हड्डी में लोच होता है। गति पकड़ने के लिए अगले व पिछले पैर फेंकते वक्त यह आश्चर्यजनक ढंग से झुककर स्प्रिंग की तरह फैल जाती है। रीढ़ की हड्डी की इसी विशिष्टता के कारण चीता जब दौड़ने की शुरूआत करता है, तो दो सेकण्ड के भीतर 72 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार पकड़ लेता है। बाद में इसकी यह रफ्तार 115 से 120 किलोमीटर प्रति घंटा तक पहुंच जाती है। यह क्षमता जंगल के किसी अन्य प्राणी में नहीं पाई जाती। अलबत्ता चीते की यह रफ्तार कुछ गज़ की दूरी तक ही स्थिर रह पाती है। अपनी इसी रफ्तार के कारण चीता शाकाहारी प्राणियों में सबसे तेज़ धावक काला हिरण को पकड़ने वाला एकमात्र हिंसक प्राणी था। अब खुले जंगल में काले हिरण

को पकड़ने की चुनौती बिल्ली प्रजाति का कोई भी जीव स्वीकार नहीं करता।

बिल्ली प्रजाति के अन्य प्राणियों की तरह चीता शिकार रात में न करके दिन में करता है। इसके ज़्यादातर शिकार छोटे प्राणी होते हैं। शिकार नज़र में आते ही चीता दबे पांव धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ता है और जैसे ही शिकार इसकी तूफानी गति के दायरे में आ जाता है, यह फुर्ती से उसे दबोच लेता है। यह कार्रवाई इतनी आनन-फानन में होती है कि शिकार संभल भी नहीं पाता। चीता अपनी कोशिश में यदा-कदा ही नाकाम होता है। शिकार से उदरपूर्ति करने के बाद चीता चट्टानों की गहरी गुफाओं अथवा घने जंगलों में आराम फरमाता है।

चीते दो-तीन के झुण्डों में भी रह लेते हैं और अकेले भी। लेकिन ये ज़्यादातर अकेले रहना पंसद करते हैं। इनके जोड़ा बनाने का समय तय नहीं होता। ये पूरे साल जोड़ा बनाने में सक्षम होते हैं। शिशुओं की उम्र तीन माह की हो जाने के बाद ही इनके बदन पर काले धब्बे उभरना शुरू होते हैं। चिड़ियाघरों में चीतों की आयु 15-16 वर्ष तक देखी गई है। वैसे इनकी औसत उम्र 20 साल होती है।

फिलहाल भारतीय नस्ल का चीता अब पूरे देश में कहीं नहीं है। इसकी अनोखी और निराली चाल इन प्रांतरों से हमेशा के लिए लुप्त हो गई है। इसलिए चीतों के पुनर्वास की पहल तो स्वागत योग्य है लेकिन हमारे देश में दुर्लभ वन्य जीवों के पुनर्वास सम्बंधी जितनी भी योजनाएं बनाई गईं वे केवल वनवासियों के विस्थापन और कुछ निर्माण कार्यों तक ही सीमित रही हैं। अपने मूल उद्देश्य की पूर्ति के सिलसिले में न तो कूनो पालपुर में गिर वन के सिंह आबाद किए जा सके और न ही हाथियों का पुनर्वास किया जा सका। यहां तक कि पर्याप्त संरक्षण के बावजूद करैरा और घाटी गांव के सोन चिड़िया अभयारण्यों से सोन चिड़िया तक विलुप्त हो गई जबकि इन अभयारण्यों से विस्थापित हुए लोगों का उचित पुनर्वास अब तक नहीं हुआ है। चीते के चित्र वन्य जीवन सम्बंधी किताबों पर अंकित दुखद अतीत बनकर रह गए है। ***(स्रोत फीचर्स)***